International Journal of Applied Research 2019; 5(1): 496-498

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(1): 496-498
www.allresearchjournal.com
Received: 22-11-2018
Accepted: 25-12-2018

डॉ. भारती निष्छल
मु. गंगवारा, सारामोहनपुर, दरभंगा, बिहार, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. भारती निष्छल
मु. गंगवारा, सारामोहनपुर, दरभंगा, बिहार, बिहार, भारत

''वैदेहीचरितम्'' (महाकाव्य) के मार्मिक स्थल

डॉ. भारती निश्छल

सारांश
वैदेहीचरितम्' विद्यावाचस्पतिरामचन्द्र मिश्र द्वारा रचित आधुनिककालीन संस्कृत–महाकाव्य है। इसमें जनकात्मजा सीता के चरित्र के उन–उन अंशों का प्रमुखता से उद्घाटन महाकवि का अभीष्ट रहा है, जिन अंशों पर आदिकवि वाल्मीकि एवं रामकथा के अन्य संस्कृत–प्रणेताओं ने अपेक्षाकृत कम अवधान दिया है। वैदेही को प्रकट करनेवाली मिथिलाभूमि की प्राकृतिक छटा एवं उसके अकूत वैभव का वर्णन, जनकपुर, अयोध्या और वन में रहती हुई सीता की जीवन–चर्या का वर्णन, विपत्तियों के आने पर सीता के मन में उत्पन्न विविध भावों का वर्णन, कोसलपति राम द्वारा गर्भवती सीता का त्याग कर उन्हें वन में भेज देने पर राम के प्रति सीता के मन में उत्पन्न भावों का वर्णन एवं सीता के भू–प्रवेश का वर्णन आदि रामकथा के ऐसे ही प्रमुख स्थल हैं। 'वैदेहीचरितम्' के मार्मिक स्थलों में सीता–स्वयंवर के समय कोमल कलेवरयुक्त राम के द्वारा धनुष चढ़ाने के अवसर पर जनक और जानकी के मन में उत्पन्न भावों का वर्णन, ब्राह्मण वेशधारी रावण के द्वारा अपहृत सीता के विलाप का वर्णन एवं इन सबसे अधिक राजा राम के द्वारा ससत्त्वा सीता का त्याग कर उन्हें वन में भेज दिये जाने एवं राजा राम के अश्वमेध के अश्व को कुश और लव के द्वारा पकड़ लिये जाने के उपरान्त पुत्रों को सान्त्वना और सत्कर्त्तव्यों का उपदेश देकर धरती में प्रवेश करती हुई सीता के मनोभावों का वर्णन प्रमुख हैं।

प्रस्तावना
संस्कृत भाषा में आदिकवि वाल्मीकि की 'रामायण' और हिन्दी (अवधी) में गोस्वामी तुलसीदास–रचित 'रामचरितमानस' के पश्चात् इन दोनों भाषाओं में रामचरित या रामकथा से संबंधित महाकाव्य की सर्जना का साहस उक्त दोनों भाषाओं के बहुत कम कवियों/महाकवियों ने किया है। विद्यावाचस्पति रामचन्द्र मिश्र मिथिलांचल–निवासी संस्कृत के एक ऐसे ही महाकवि हैं, जिन्होंने बीसवीं सदी में संस्कृत भाषा में रामकथा की एक सर्वाधिक प्रमुख पात्र सीता के चरित्र को आधार बनाकर 'वैदेहीचरितम्' संज्ञक महाकाव्य की सर्जना की है और इसमें सीता के चरित्र से सम्बन्धित उन प्रसंगों को अपेक्षाकृत अधिक विस्तार प्रदान किया है, जिनकी ओर संस्कृत, हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में सीता–चरित पर लेखनी उठानेवाले कवियों ने या तो कम ध्यान दिया है अथवा ध्यान ही नहीं दिया है। 'वैदेहीचरितम्' के ऐसे स्थलों में मैथिली को उत्पन्न करनेवाली मिथिला के प्राकृतिक सौन्दर्य–वर्णन के स्थल, मिथिला, अयोध्या और वनवास में रहती हुई सीता की दिनचर्या के वर्णन–स्थल, वन में विपत्तियों के उपस्थित होने पर सीता के विविध भावों और चेष्टाओं के वर्णन–स्थल, राजा राम के द्वारा गर्भवती सीता को परित्यक्त कर वन में भेजने का वर्णन–स्थल एवं राजा राम के द्वारा लव–कुश को पहचान लिये जाने के उपरान्त सीता के भू–प्रवेश का वर्णन–स्थल प्रमुख हैं। यों तो कवि की सरल–सहज अभिव्यक्ति शैली के कारण पूरा महाकाव्य ही मनोरम और उत्कृष्ट है, किन्तु उनमें भी कतिपय स्थल ऐसे हैं, जो अत्यन्त भाव–विभोर कर देनेवाले और मार्मिक हैं। 'वैदेहीचरितम्' के मार्मिक स्थल का सर्वप्रथम दर्शन मिथिला के अकाल (दुर्भिक्ष)–वर्णन के प्रसंग में प्रथम अध्याय में होता है। दुर्भिक्ष की स्थिति इतनी भयावह और त्रासद है कि आकाश बादल–विहीन हो गया है, नदी और तालाब सूख गये हैं, पशुओं को घास/चारा प्राप्त नहीं हो रहा है, वृक्षों के पत्ते तक गर्मी से झुलस गये हैं, भूखे–प्यासे पथिकों को अन्न–पानी तो क्या, वृक्षों की छाया तक नसीब नहीं हो रही है, विश्वभ्भरा धरती अपने निवासियों के भरण–पोषण में अपने को असमर्थ पाकर मानो हवा के झोंके से उड़ती हुई धूलों से अपने मुख को ढँक चुकी है। अनावृष्टि–जन्य दुर्भिक्ष के कारण भूखी–प्यासी जनता को देखकर राजा जनक भी झंझावात से क्षुब्ध सागर की तरह चंचल हो गये हैं। मिथिलांचल की जनता की इस मार्मिक स्थिति का वर्णन महाकवि ने इन शब्दों में किया है–

''अम्भांस्यशुष्यन्सरसां नदाना–
ञ्चापेदिरे कृच्छदशां वनान्ताः।
गोभिश्चरन्तीभिरपि प्रयासा–
दापेदिरे नैव तृणान्यवन्याम्।।

चण्डातपेऽन्नस्य कृते भ्रमद्भिः
क्षुत्क्षामकण्ठैरधिमार्गदेशम्।
छाया तरूणामपि सन्निधाने
पान्थैः प्रयत्यापि सुदुर्लभासीत्।।''[1]

'वैदेहीचरितम्' का अपर मार्मिक प्रसंग धनुषयज्ञ के समय उपस्थित होता है, जब बड़े–बड़े शूर–वीर भी शिवधनु को उठाने और चढ़ाने में अक्षम हो जाते हैं और महाराजा जनक के सेनापति द्वारा धरती को वीरविहीन घोषित करने पर गुरुविश्वामित्र की आज्ञा से श्री राम धनुष उठाने के लिए उद्यत होते हैं। उस समय मञ्चस्थ राजाओं की मुखकान्ति म्लान हो जाती है, अनेक राजा लज्जित होकर यज्ञ–मण्डप से बहिर्मूत हो जाते हैं, किन्तु सर्वाधिक उथल–पुथल हो रही है वैदेही सीता के मन में, कि सम्पूर्ण कोमल अंगोंवाला यह किशोर क्या धनुष को उठा और झुका सकेगा? क्या इसके हाथों को विजय श्री मिल सकेगी? क्या कोई बालहंस मंदराचल को धारण करने में सक्षम हो सकेगा? क्या शुक का छोटा–सा नवजात आकाश में विचरण करने में सक्षम हो सकेगा? सीता के मन में उठनेवाले इन प्रश्नों के आक्षिप्त उत्तर निषेधात्मक ही हैं, किन्तु दूसरे ही क्षण, उसके मन में आशा की एक किरण भी कौंध जाती है कि क्या ठिकाना, जब विधाता अनुकूल होता है, तब असम्भव भी सम्भव हो जाता है। समवयस्का सखियाँ भी उसे किशोर श्री राम के कृतकार्य होने की बात कहकर धीरज बँधाती है। महाकवि के शब्द सीता के इन भावों को कितनी मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त करते हैं–

''बालः कोऽपि मरालः किं मन्दरगिरिधारी।
अजातपक्षः शुकशिशुरथवा व्योमविहारी।।
ग ग ग ग ग ग
घटयत्यभिमतमिदं मनसिकृत्यासौ कन्या।
गिरियुगलान्तरगतेव जाता रुद्धा वन्या।।
एवंविधे व्यतिकरे काले स्वल्पे व्यतियति।
काचिद्वयसासमा 'किशोरश्चपि नमयति'।।
इत्यूचे श्रुत्वैव तदाकुलदृष्टिसरोजा।
उत्कलिकावात्याभिघातसञ्चलितोरोजा।।[2]

घृत से भरे हुए कलश की रक्षा के समान जिस सीता का स्नेह और सतर्कतापूर्वक जनक–सुनयना ने लालन–पालन किया था, विवाहोपरान्त उन्हें विदा करते समय उनका ही नहीं, सीता के सम्पर्क में रहनेवाली जनकपुर के सभी नर–नारियों के हृदय स्नेहाकुल हो जाते हैं। माता सुनयना का हृदय आसन्न वियोग से विह्वल हो जाता है, तथापि ने प्रयासपूर्वक अपने आँसुओं को पोछकर एवं रुद्ध कण्ठ को खोलने का प्रयास करती हुई पुत्री सीता का समयानुकूल मार्गदर्शन करती हुई कहती हैं कि अभी तक तुम मेरे प्रति जैसी भावना रखती थी, वैसी ही भावना अब अपनी सासुओं के प्रति रखना; पैतृक सम्पत्ति स्त्रियों के लिए उसी प्रकार अल्प समय के लिए ही उपभोग्य होती है, जिस प्रकार मार्ग में पड़नेवाले वृक्षों का उपयोग; गुरुजनों और पति के सहोदर भाइयों के प्रति आदर का भाव रखना और अपने प्रियतम राम का अनुराग पाकर भी कभी घमण्ड का भाव मन में नहीं आने देना। माता की सीख जानकी चुपचाप सुनती रही, किन्तु आँसुओं से भरी हुई उसकी आँखें उसके हृदयगत भावों का स्पष्ट बयान कर रही थीं। महाकवि लिखते हैं–

''इयदवधि मयित्वं भावनां यामधार्षी
र्दशरथरमणीनां तां धनं भावयेथाः।
भवति हि रमणीनां पैतृकं मार्गवर्त्ति–
द्रुमकुलमिव किञ्चित्कालमेवोपभोग्यम्।।

गुरुजनवरिवस्यामादरेणाचरन्ती
पतिभवनसमृद्धौ बध्यमानानुरागा।
अनुपधि च समस्तां बन्धुतां सोदराणां
मनसि विमृशती त्वं स्वादरं कामयेथाः।।.....''[3]

ब्राह्मण का छद्मवेष धारण करनेवाले रावण के द्वारा अपहृत सीता का विलाप–प्रसंग भी अत्यन्त कारुणिक और हृदयस्पर्शी है। रावण के रथ पर वायु–वेग से ले जायी जा रही सीता विलाप करती हुई कहती है, 'हे नाथ! कहाँ देर कर रहे हो? मैं पराधीन होकर विपत्ति में पड़ी हूँ। हे दयालु पुरुषवर! इस विपत्ति से मेरी रक्षा करो! जिन आँखों ने मृग का पीछा करते हुए आपके दर्शन किये थे, वे आँखें राक्षस–दर्शन से दूषित होकर भी नष्ट नहीं हुई, इसलिए मैं लज्जित हूँ। हे नाथ! आपके एक बार के दर्शन से मेरे सारे पाप धुल जाएँगे। जल्द आइए! विलम्ब मत कीजिए। इस विपत्ति को सहने में मैं समर्थ नहीं हूँ। इस प्रकार विलाप करती हुई रथ पर स्थित सीता चेतना–शून्य हो जाती है। महाकवि मिश्र के प्रसंगाधीन वाक्य कितने मार्मिक हैं–

''क्व नु चिरयसि नाथ स्वावशाहं विपद्ये
पुरुषवर दयालो रक्ष मामापदोऽस्याः।''[4]

''सकृदपि यदि नाथ त्वां विलोके जघन्या
निखिलमपि निजाहः क्षालयामि क्षणेन।
झटिति चल, विलम्ब्यालं क्षमा नास्मि सोढुं
व्यसनमिति लपन्ती सा रथस्था मुमोह।।''[5]

रामकथा का कदाचित् सबसे अधिक मार्मिक प्रसंग है गर्भवती सीता के परित्यागपूर्वक वनवास का एवं उनके भू–प्रवेश का। भद्र नाम के गुप्तचर के द्वारा सीता के सम्बंध में एक धोबी की अभद्र टिप्पणी से आहत होकर कर्त्तव्यबोध के वशीभूत राजा राम ने सीता का परित्याग किया और सच्चाई से अवगत रहने के बावजूद न्याय–रक्षा की अपेक्षा से लोकापवाद से डरकर वाल्मीकि मुनि के आश्रम के समीप वन में छोड़ देने का आदेश लक्ष्मण को दिया। वन में लक्ष्मण के मुख से राजा राम के संदेश और आदेश से अवगत होकर सीता शोक–समुद्र में डूब गयी, किन्तु धैर्य धारण कर प्रस्थानोद्यत प्रणत लक्ष्मण को आशीष देकर राम के प्रति संदेश–स्वरूप बोली कि 'हे राजन्! आपकी आज्ञा से पूर्व में ही मैं अग्नि में प्रवेश कर सुपरीक्षित हो चुकी हूँ, फिर आपकी नगरी में निवास करती हुई मैं लोकापवाद का पात्र कैसे बन गयी? क्या प्रवादमात्र से राजा के द्वारा अपनी प्रजा को दुःखी करना न्यायोचित है? क्या आपके उज्ज्वल वंश का यह निर्णय स्वीकारयोग्य है? मैं जानती हूँ कि आप मुझे शुद्ध समझते हैं और इस लोकापवाद को मिथ्या मानते हैं, किन्तु साहस के अभाव के कारण मुझ साध्वी को त्याग कर आपने कर्त्तव्य भाव को ही प्रकट किया है। आपकी संतान का रक्षा–विषयक भार यदि बाधक न होता, तो क्या मैं आपसे विहीन होकर जीने की इच्छा कर सकती हूँ? प्रजाजनों के प्रिय होकर आप अपनी कीर्तिलता को दिग्दिगन्त तक प्रसृत करें, किन्तु मैं तो कलंकनित्व–दोष के साथ वन में त्यक्ता होकर प्रजा होने के अधिकार से भी वंचित कर दी गयी।[6] अनन्तर सीता ने बाल्मीकि–आश्रम में समयानुसार दिव्यस्वरूप कुश और लव को जन्म दिया। महर्षि वाल्मीकि की देखरेख में दोनों अस्त्र–शस्त्र–सहित सम्पूर्ण विद्याओं में निष्णात हो गये। उनकी वीरता की गाथा अश्वमेध यज्ञ के अश्व की रक्षा में सन्नद्ध सैनिकों के अयोध्या लौटने पर, महाराज श्री राम ने भी सुनी और उन्हें विश्वास हो गया कि जानकी की सन्तान के अतिरिक्त किसी दूसरे में मेरी सेना को रोकने की शक्ति ही नहीं है। अश्वमेध यज्ञ की पूर्णाहुति पर अगस्त्य ऋषि के संकेत पर महर्षि वाल्मीकि ने अपने दोनों शिष्यों–कुश और लव –को रामायणगायन का आदेश दिया। बालक–युगल के मधुर कण्ठों से रामकथा सुनकर सारी सभा भाव–विभोर हो गयी। महाराजा राम तो सीता–वनवास–सम्बन्धी अपने कृत्य को याद कर पश्चात्ताप; लज्जा और दुःख से भर गये, इसलिए कथागायन बन्द कर दिया गया। वहाँ से लौटे हुए तपस्वियों के मुख से अपने पति के दुःखी हो जाने का समाचार सुनकर सीता अतिशय कष्ट का अनुभव

करने लगी। वह सोचने लगी कि मेरे अपवाद को वृथा जानते हुए भी प्रियतम लोकनाथ मुझे त्यागकर भी सुखी नहीं हुए। पतिदुःखदायिनी होकर मैं जीवित हूँ, मेरे जीवन को धिक्कार है। जबतक मैं जिन्दा रहूँगी, अपने को कलंक से मुक्त नहीं कर सकूँगी–

''जीवामि यावन्न ततो व्यलीका
न्नाथं निजं मोचयितुं क्षमिष्ये।''[7]

इधर राजा राम अपनी भूलों पर विषन्न होते हुए जब दोनों पुत्रों सहित सीता को वापस लाने के उद्देश्य से वाल्मीकि–आश्रम में पहुँचे, तो सीता को लगा कि अब तो मुझे इस रूप में देखकर श्री राम पुनः दुःखी होंगे। इसलिए उसने दोनो पुत्रों को बुलाकर, दुलारकर, आश्वस्त कर और समझा कर आदेश दिया कि आज राजा राम वन में आ रहे हैं। वे तुम दोनों के पिता और सम्पूर्ण पृथ्वी पर वन्दनीय हैं। तुम दोनों पुत्र उनके चरणों में प्रणाम करना और मुझे मरने के उपरान्त भी याद करते रहना–

''आयाति राजा वनमद्य तातः
स वाम शेषावनिवन्दनीयः।
वत्सौ युवां तत्पदयोर्नमेतं
किञ्च प्रमीतामपि मां स्मरेतम्''[8]

सीता दोनों पुत्रों को आदेश देकर महाप्रयाण के उद्देश्य से एकान्त में जाकर समाधिस्थ बुद्धि से बोली कि 'हे माँ! इस संसार में अनन्य प्रतिमा क्षमा की मूर्ति तुम ही हो। 'क्षमा' नाम से प्रसिद्ध तुम, अपनी इस बेटी को दयार्द्र होकर क्षमा करना। जन्मान्तरीय संचित अपने पाप से मैंने बहुत कष्ट का अनुभव किया। लोकापवाद रूप अग्निशिखा के स्वरूप में स्थित मेरे पाप से राघव भी जलते रहे। सम्पूर्ण सौजन्य गुणराशि एवं संसार के कल्याणार्थ अवतार धारण करनेवाले अपने दामाद श्री राम को भी, जो मेरे ही कारण दुःखी हैं, क्षमा करना। शरीर से, वचन से और मन से भी या दूसरे जन्म में भी यदि मेरा अनुराग परपुरुष में रहा है, तो हे माँ! मुझ पापिनी को तुम दण्डित करो। हे अम्ब! यदि तू मुझे एक पतिनिष्ठ, शुद्ध और अपनी गोद में ग्रहण करने योग्य समझती है तो अविलम्ब अपनी इस पुत्री को धारण करो–

''तातः क्षमामूर्त्तिरसि त्वमेव
जगत्यनन्यप्रतिमा क्षमेति।
नाम्नाप्रसिद्धा त्वमिमां स्वकीयां
सुतामुदञ्चत्करुणा क्षमेथाः।।
– – – – – – – – –
अनन्यभाजं यदि मामवैषि
शुद्धां निजांकग्रहणापयुक्ताम्।
सद्यस्तदुद्भूय धरान्तरालाद्
गृहाण माममब निजां तनूजाम्।।''[9]

इतना कहकर सीता अधोमुख होकर ज्यों ही धरती का स्पर्श करती है, पृथ्वी से जलती हुई अग्नि के समान एक ज्योति निकलती है और सीता को भुजा से उठाकर सबको विस्मित करती हुई लुप्त हो जाती है। दुःखों से भरी कथाओं की मूर्त्ति, पति को प्राण माननेवाली पवित्र व्रतवाली सीता जिस पृथ्वी से उत्पन्न हुई थी, उसी में विलीन हो गयी।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि महाकवि पं. रामचन्द्र मिश्र–प्रणीत 'वैदेहीचरितम्' अनेक मार्मिक स्थलों से युक्त हैं और प्रसिद्ध आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, यह उनकी महत्ता, भावुकता और लोकप्रियता का प्रमाण भी है।

निष्कर्ष

'वैदेहीचरितम्' आधुनिककालीन रामकथा का एक उल्लेखनीय संस्कृत–महाकाव्य है। इसके रचयिता विद्यावाचस्पति रामचन्द्र मिश्र ने इसमें राम–कथा के मार्मिक प्रसंगों को मौलिकता और उत्तमता के साथ प्रस्तुत किया है। यह कृति इस अर्थ में भी उल्लेखनीय है कि इसमें राम–कथा की सीता–जैसी सुसंस्कृत और अनन्य पतिव्रता के चरित्र के द्वारा उन प्रसंगों और प्रश्नों को भी सामने लाने का काम किया गया है, जो नारी के प्रति होनेवाले अन्यायों के विरुद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा देते हैं। विशेष रूप से लंका–विजय के उपरान्त श्री राम द्वारा ली गयी अग्नि–परीक्षा में शुद्ध साबित हो चुकी सीता को, महज लोकापवाद के भय से निर्वासित कर वन–वन भटकने के लिए छोड़ देने के प्रसंग में महाकवि ने अत्यन्त कुशलतापूर्वक सीता के द्वारा, महर्षि वाल्मीकि के द्वारा और स्वयं राजा राम के द्वारा सीता के प्रति हुए अन्याय को स्वीकार कराया है। रामकथा के निष्पक्ष पाठकों को, विशेष रूप से सीता की जन्मधरती मिथिला के निष्पक्ष पाठकों और राम–कथा–विशेषज्ञों को ससत्त्वा सीता का निर्वासन सर्वथा अनुचित प्रतीत होता रहा है और यह प्रसंग श्रीराम के मर्यादा पुरुषोत्तमत्व को भी मर्यादित करनेवाला प्रतीत होता है। 'वैदेहीचरितम्' के राम स्वयं अपनी उस भूल का सुधार पश्चात्ताप एवं दोनों पुत्रों–सहित सीता को अयोध्या वापस लाकर करना चाहते हैं, किन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी होती है और श्रीराम अपने उत्तम चरित्र के इस कृष्ण–पक्ष को शुक्ल करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। आधुनिक स्त्री–विमर्श की दृष्टि से भी यह कृति उल्लेखनीय है।

सन्दर्भ

1. विद्यावाचस्पति रामचन्द्र मिश्र : 'वैदेहीचरितम्', प्रकाशक–का0 सिं0 द0 संस्कृत–विश्वविद्यालय, दरभंगा प्रकाशन वर्ष–1985 ई0, प्रथम सर्ग, श्लोक सं0–48–49
2. उपरिवत्, तृतीय सर्ग, श्लोक सं0–34
3. उपरिवत्, चतुर्थ सर्ग, श्लोक सं0–40–41
4. उपरिवत्, षष्ठ सर्ग, श्लोक सं0–7
5. उपरिवत्, षष्ठ सर्ग, श्लोक सं0–9
6. द्रष्टव्य : उपरिवत्, अष्टम सर्ग, श्लोक सं0–24–32
7. उपरिवत्, दशम सर्ग, श्लोक सं0–6
8. उपरिवत्, दशम सर्ग, श्लोक सं0–33
9. उपरिवत्, दशम सर्ग, श्लोक सं0–36 एवं 41